ISSN 2320-768X, Impact Factor : 2.2
Vol. IV, Issue I (January – 2016)

भारतीय प्रवासी तिब्बती बौद्ध संगीत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

Dr. Sangeeta Gorang
Associate Professor in Music (Instrumental)
KVA DAV College for Women, Karnal (Haryana) 132001

Paper Submission Date: 10th Jan. 2016
Paper Acceptance Date: 15th Jan. 2016

सांराश

तिब्बतियन बौद्ध संगीत शास्त्रीय संगीत पर आधारित न होकर लोकसंगीत पर आधारित है। लोकसंगीत चाहे भारत के किसी क्षेत्रीय प्रान्त का हो, तिब्बत का हो अथवा किसी अन्य देश का, शास्त्रीय संगीत से भिन्नता रखता है। लोक संगीत के अर्न्तगत लोक–गीतों का साहित्य अपनी–अपनी प्रान्तीय भाषाओं पर आधारित होता है तथा इनमें प्रयुक्त लय, ताल, स्वरों का उतार–चढ़ाव एंव वाद्य आदि ही लोकगीतों में संगीतिक अंश भरते है। लोकगीतों को संगीतिक बनाने में लोक–धुनें विभिन्न प्रान्तों की अपनी–अपनी संस्कृति, भाषा, रहन–सहन, रीति–रिवाज के आधार पर बनती हैं इसीलिये विभिन्न प्रान्तों में अलग–अलग लोकधुनें प्रचलित हैं, भारत की जैसे–ब्रज की होरी धुन, पंजाब का टप्पा–हीर–माहिया उत्तर प्रदेश की कजरी, गुजरात का गरबा, हिमाचल की पहाड़ी धुन आदि तथा तिब्बत की जैसे – लहासा का नंगमा, उत्तर–पश्चिमी तिब्बत का स्टोड गज़हास इत्यादि। जो वर्तमान में भारतीय तिब्बती बौद्धों द्वारा गाई–बजाई जाती है।

परिचय

हिमाचल प्रदेश की काँगड़ा घाटी में मैकलोड़गंज धर्मशाला नामक स्थान, जो कांगड़ा ज़िले के मुख्यालय से लगभग 18 किलोमीटर दूर धौलाधार पहाड़ी श्रृखंला में स्थित है। धौलाधार की यह पहाड़ी श्रृखंला हिमालय के बाहरी आंचल का भाग है और इसकी ऊँचाई 15,000 फूट है। मैकलोडगंड के समीप 'लाका जोत' नामक एक दर्रा है। यहाँ दिसम्बर–जनवरी से लेकर जुलाई–अगस्त तक इन पहाड़ियों के ऊपरी भागों पर बर्फ रहती है। बाद में कहीं–कहीं बर्फ की पट्टी ही शेष रह जाती हैं काँगड़ा वासी इसे 'सुराली दा फेर' कहते हैं।

ऐतिहासिक विवरणों के अनुसार इसके उत्तर–पश्चिमी दिशा में चम्बा, उत्तर में कश्मीर, पूर्व में तिब्बत, दक्षिण में शिमला स्थित है।[1]

बौद्ध तीर्थ स्थल मैकलोड़गंज (धर्मशाला)

भारत में बौद्धधर्म के आधुनिक तीर्थ–स्थल के रुप में धर्मशाला पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। नोबल पुरुस्कार से सम्मानित पवन दलाईलामा, "दलाईलामा"[2] परम्परा के चौद्धदवें गुरु हैं। तिब्बती बौद्धधर्म की मान्यताओं के अनुसार ये अवलोकितेश्वर के अवतार (रिमपोछे RIM POCHE) हैं। पूरे विश्व में बौद्ध

1 कांगड़ा गज़टीयर – भाग – 1
पृष्ठ 16

2 'दलाईलामा' एक धर्मिक गुरु की पदवी हैं साधारणतयः इन पुरोहित राजाओं को 'दलाईलामा' कहा जाता हैं, किन्तु तिब्बती इन्हे "ग्याल–वा–रिन–पो–चे" कहते हैं, जिसका अर्थ हैं मूल्यवान आभायुक्त रत्न।

धर्मावलंबी उनका आदर करते हैं, और श्रद्धा के साथ उनकी शिक्षाओं को मानते हैं। सन् 1959 ई० में चीन से अपने सहयोगियों व अनुयायियों सहित भारत में आगमन हुआ था। कुछ महीने मंसूरी में व्यतीत करने के पश्चात् प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरु ने इनहे धर्मशाला स्थित मैकलोड़गंज में रहने की आज्ञा दे दी।

आज धर्मशाला का सबसे मुख्य आकषर्ण तिब्बती बुद्ध मठ है। यह स्थान परम पावन दलाईलामा जी के निवास स्थान होने के कारण बौद्धधर्म तिब्बती की संस्कृति का केन्द्र बिन्दु बन गया है। लोग इसे छोटा लहासा भी कहते हैं। मकलोड़ गंज के ठीक मध्य में एक स्तुप और एक मन्दिर में घूमने वाला एक विशाल प्रार्थना चक्र बना है। इसके अतिरिक्त दोनों बाहरी दीवारों के साथ–साथ अनेकों छोटे प्रार्थना चक्र बने हैं, जिनको प्रत्येक आने–जाने वाला बौद्ध धर्मानुयायी घुमाकर पुण्य अर्जित करता है। इन प्रार्थना चक्रों पर पवित्र मंत्र "ऊँ मणि पदमें हं" खुदा हुआ है। तिब्बती बौद्ध परम्परा के अनुसार इस प्रार्थना चक्र को घुमाने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

मैकलोड़ गंज बाजार से थोड़ी दूर पश्चिम की ओर एक छोटी सी पहाड़ी है, जिसे थैगछन छौलिंग (THE GCHEN CHOSLING) के नाम से जाना जाता है। इस पहाड़ी पर दलाईलामा जी का निवास स्थान, चुगल्हाखंड (Tsuglagkharg) मन्दिर व उसका सभा कक्ष, बौद्ध दर्शन अध्ययन संस्थान, नांग्याल तान्त्रिक महाविद्यालय भिक्षुओं–भिक्षुणियों के रहने का निवास स्थान इत्यादि निर्मित है। बौद्ध धर्मावलंबी अपनी सामर्थयानुसार कलाकारों को पारिश्रमिक देकर बौद्ध मन्त्रों को पत्थरों पर खुदवाते हैं और पुण्य अर्जित करते हैं।

इस पहाड़ी के आरम्भ में ही बौद्ध दर्शन अध्ययन संस्थान है। इसके बाद यहाँ अध्ययन करने वाले भिक्षुओं व पढ़ाने वाले आचार्यो के आवास स्थल है। मुख्य मन्दिर के बांयी ओर तीन मन्जिला नांग्याल तान्त्रिक महाविद्यालय है। इस महाविद्यालय में लगभग 80 भिक्षु छात्र हैं और बौद्ध दर्शन अध्ययन संस्थान में भिक्षु छात्रों की संख्या 50 के लगभग हैं। भिक्षुओं के साथ–साथ अनेक भिक्षुणियाँ भी यहाँ से थोड़ी दूर सामने की पहाड़ी पर बने भिक्षुणी विहार में है।

मन्दिर के सामने नीचे की ओर बने बरामदे में प्रत्येक संध्या को यहाँ छात्रों द्वारा तिब्बती तर्क अम्यास (वाद–विवाद) देखते ही बनता है। इस तर्क पद्धति में वह भिक्षुक जिसे प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं, एक ओर बैठ जाते हैं और अन्य कई प्रश्नकर्त्ता भिक्षु बार–बार ताली बजाकर व विभिन्न भाव भंगिममाओं के साथ दूसरे भिक्षुक से प्रश्न पर प्रश्न करते जाते हैं। यदि प्रश्नों के उत्तर देने वाला भिक्षु प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाता तो जो अगल–बगल में बैठे सभी भिक्षुक तीन बार ताली बजाकर उससे पुनः दूसरा प्रश्न पूछते हैं। इस प्रकार बारी–बारी तर्क अभ्यास द्वारा इन संस्थाओं का प्रत्येक भिक्षुक ज्ञान में पारंगत हो जाता है।

सन् 1961 में बनकर तैयार हुये इस मुख्य बौद्ध मन्दिर का नाम चुगल्हाखंड है। इसके समकक्ष व पूजा स्थल में प्रवेश करने के लिये तीनों दिशाओं में एक–एक प्रवेशद्वार है। पूजा स्थल के ठीक मध्य में भगवान् बुद्ध की एक विशाल काँस्य मूर्ति है जो छत जितनी ऊँची है। इस मूर्ति के बायें ओर पदम्संभव

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 2.2
Vol. IV, Issue I (January – 2016)

(गुरु रिम्पोछे) की बैठी हुई मुद्रा में कांस्य मूर्ति है, जिसमें उनके हाथ में बज्र दर्शाया गया है। साथ ही अवलोकिलेश्वर की एक विशाल खड़ी प्रतिमा है। इस प्रतिमा में एक के ऊपर एक कुल पाँच सिर बने हैं और प्रत्येक सिर में तीन मुँह हैं। प्रमुख हाथों की संख्या आठ हैं, परन्तु छोटे–छोटे हज़ारों अन्य हाथ हैं। इन दोनों मूर्तियों के सामने एक छोटा सा अति सुन्दर स्वर्ण निर्मित मन्दिर हैं, जो तिब्बत से यहाँ लाया गया है। यह मन्दिर शीशें के बक्सें में बन्द है। इनके अतिरिक्त अनेकों कलात्मक वस्तुओं को यहाँ संग्रहित किया गया है।

तिब्बती पुस्तकालय तथा अभिलेखाकार

तिब्बती पुस्तकालय तथा अभिलेखागार मुख्य मन्दिर से लगभग 3 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस स्थल को तिब्बती लोग "गेंगदन किशैंग" कहते हैं, जिसका अर्थ हैं सुखद बर्फीली घाटी (Happy Snow Vally) हैं। इसकी स्थापना सन् 1970 में दलाईलामा जी के कर कमलों द्वारा हुई। इस पुस्तकालय और अभिलेखागार की स्थापना का मुख्य उद्देश्य तिब्बती लाईब्रेरी में लगभग 60,000 बौद्ध ग्रन्थ संग्रहित हैं, जो तिब्बती, अंग्रजी, जापानी, कोरिया, चाईनीज़ इत्यादि भाषाओं में हैं।[3] लाईब्रेरी के ऊपरी मन्जिल में संग्रहालय व अभिलेखागार विभाग में लगभग एक हजार दुर्लभ व बहुमूल्य मूर्तियाँ, तंखा, तिब्बती, सिक्के, मुद्रा नोट और अन्य सामग्रियाँ हैं।

तिब्बती लाईब्रेरी के पास ही 'तिब्बती मेडिकल एण्ड आस्ट्रोलोजिकल इंस्टीटयूट' निर्मित हैं। इस चिकित्सा विभाग में प्राचीन तिब्बती आचमी पद्धति से रोगियों का इलाज करने की विधि छात्र छात्राओं को सिखाई जाती है।

तिब्बती इंस्टीटयूट ऑफ परफारमिंग आर्ट (TIPA)

तिब्बतयिन इन्सटीटयूट ऑफ परफारमिंग आर्टस (TIPA) नामक संस्था की स्थापना सन् 1959 ई० में पर पावन इलाईलामा जी ने मैकलोड़गंज धर्मशाला में किया। इस संस्था को आरम्भ करने का उद्देष्य तिब्बती संस्कृति को सुरक्षित रखना था और आज भी यह संस्था (TIPA) लहासा के गीत, संगीत, नृत्यकला, आपेरा (ड्रामा) तथा तिब्बती वाद्यों इत्यादि को सुरक्षित रखने के कार्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

इस सांस्कृतिक संस्थान (TIPA) का उद्देश्य न केवल तिब्बती संस्कृति और कला को सुरक्षित मात्र रखना है, अपितु साथ ही समूचे विश्व में तिब्बती संस्कृति का प्रसार करना भी है। इस कला–शिक्षण संस्थान के विभिन्न छात्र–छात्राओं ने अन्य देशों में जाकर विविध सांस्कृतिक कार्य प्रस्तुत किये हैं और सम्मान व पुरस्कार अर्जित किये हैं।

अभी हाल ही में TIPA के गायक, वादक, नर्तक तथा नाटक कलाकारों का एक दल हौलैण्ड में अपनी कला का प्रदर्शन करके लौटा है। इस प्रकार TIPA राष्ट्रीय, अन्तराष्ट्रीय स्तर पर तिब्बतियन संस्कृति के प्रसार कार्य करने में जुटी हुई है। इस सम्बन्ध में परम पावन दलाईलामा जी के शब्दों में

3 तिब्बतियन लाईब्रेरी के डाइरेक्टर ग्यात्सों छेंरिग के अनुसार – "तिब्बती भाषा, कला व संस्कृति सम्बन्धी अध्ययन साम्रगी विश्व में सम्भवतः सबसे बड़ा केन्द्र हैं।" साक्षात्कार – दिनांक 11–1–2011

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 2.2
Vol. IV, Issue I (January – 2016)

"Today we are going through a critical period of time : we are a nation, which has a one-of-a-kind cultural legacy of the past and now we must face the risk of seeing it disappear. We need your help, the international help, because protecting a one-of-a-kind ancient culture, responsibility not only of the nation affected, but also of the world community.[4]

आज 'तिब्बतियन इन्स्टीट्यूट ऑफ परफारमिंग आर्टस में 75 के लगभग नायक–नायिकायें हैं। इन्ही नायक–नायिकाओं को विभिन्न श्रेणियों में बांटा गया हैं। उदाहरणार्थ शिक्षक, अध्यापक, जूनियर शिक्षक, साधारण प्रस्तुतकर्त्ता, संगीतकार, वाद्यकार एवम् शिक्षार्थी हैं। एक नया कलाकार कम से कम एक वर्ष में शिक्षण के उपरान्त ही आपेरा, लोकनृत्य, एकल गीत, वादन आदि के कार्यक्रमों में भाग ले सकता है।

भारत के अलावा नेपाल में भी TIPA नामक सांस्कृतिक संस्था तिब्बत की कला एंव विचारों को संरक्षित रखने के प्रयास कार्य में जुटी हुई है। साक्षात्कार में जानकारी के अनुसार "धर्मशाला और नेपाल की TIPA शाखाओं में निरन्तर आपसी तालमेल है ताकि तिब्बतियन इन्स्टीट्यूट ऑफ परफारमिंग आर्टस् नामक स्कूल राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नया से नया कार्यक्रम प्रस्तुत कर सके और ख्याति अर्जित करें। [5]

तिब्बतियन इन्स्टीट्यूट ऑफ परफारमिंग आर्टस् (TIPA) अपने आप में एक स्वतन्त्र संस्था है। वर्तमान में इस में 153 सदस्य हैं। जिसमें से 23 छोटे बच्चे हैं, जो 7 से 14 वर्ष के आयु वर्ग में आते है, इन बच्चों को TIPA में सामुहिक रुप से संगीत शिक्षा दी जाती है। इस समय TIPA में तीन वर्ष के लिये 12 अध्यापकों का प्रशिक्षण कार्य चल रहा है। यहाँ यह प्राध्यापक गायन–वादन, नर्तन तथा नाटकों की शिक्षा ले रहे है। ट्रेनिंग ले रहे अध्यापकों में 6 पुरुष तथा 6 स्त्रियाँ हैं जो देश–विदेश के विभिन्न क्षेत्रों जैसे सिक्किम, लहासा, लदद्ाख आदि से आये हैं। प्रशिक्षण कार्य पूर्ण होने के पश्चात् इन प्राध्यापकों की नियुक्ति विभिन्न तिब्बतियन विलेज चिलड्रन स्कूलस् (TVCS) में संगीत अध्यापक के रुप में हो जाती हैं।

इसके अतिरिक्त TIPA में 15 सीनियर कलाकार, 10 प्रशिक्षक, 11 जूनियर कलाकार, 8 क्राफट–मैन, 13 टेलरिंग विभाग में तथा 3 शूज़ मेकर्स विभाग में, 10 Music विभाग में हैं।

तिब्बती लोकसंगीत

भारत प्रवासीय तिब्बतियों का लोकसंगीत तिब्बत का प्राचीन लोकसंगीत है जो लहासा, पूर्वी तिब्बत, पश्चिमी तिब्बत के लोकनृत्यों से ओत–प्रोत हैं। तिब्बती संगीत में नृत्य की अपनी विशेष महत्व है। चाहे कोई उत्सव हो या पार्टी, अथवा घर की साँयकालीन सभा, तिब्बती लोक स्टोड गज़हास (नृत्य गीत का एक प्रकार) और नंगमा (गायन का एक प्रकार) का नृत्य–गान करते हैं। नृत्य के साथ तिब्बती ल्यूट, पिवांग (दो तारों वाला वाद्य) बाँसुरी ड्रम, हैमर डलसीमर इत्यादि वाद्य बजाते हैं।

1. **लोकगीत** –लोकगीत लोकसंगीत की पहली कड़ी है। यहाँ के जनमानस में जन्म से लेकर मरणोपरान्त तक विविध संस्कार गीत गाये जाते

4 Information on touring TIPA. A Information book Page 3

5 TIPA में साक्षात्कार द्धारा प्राप्त जानकारी के अनुसार दिनांक 26.5.2011

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 2.2
Vol. IV, Issue I (January – 2016)

हैं, इसके अतिरिक्त उत्सवों, ऋतुओं, फसल बोना व काटना, हल चलाना, घर बनाना, भिक्षा माँगना, व्यवसाय, जुआ खेलना, युद्ध की तैयारी, लोकगाथा, प्रेमगाथा पारिवारिक इत्यादि अनेक विषय सम्बन्धी गीत गाये जाते हैं। बौद्ध धर्म में पवित्र–आत्माओं एंवम् तिब्बत के पवित्र पहाड़ों की प्रशंसा में भी अनेक गीत तिब्बतीयों में लोकप्रिय हैं।

नंगमा – नगंमा तिब्बत के लोकगीतों का एक प्राचीन प्रकार है। इन लोकगीतों में तिब्बत–मुस्लिम संगीत का मिश्रण है। कहा जाता हैं कि 'नंगमा' शब्द उर्दू या परशियन 'नगमा' शब्द से लिया गया है। जिसका अर्थ हैं धुन या स्वर या मैलोडी (मधुर स्वर)। ऐसा मानना उचित प्रतीत होता हैं, क्योंकि लहासा और कश्मीर भौगोलिक स्थिति के अनुसार बिल्कुल पड़ोसी राज्य हैं, फलस्वरुप दोनों की सभ्यता, सस्कृति व संगीत पर एक दूसरे का प्रभाव पड़ना कोई आश्चर्य की बात नही हैं। परन्तु कुछ तिब्बती संगीतकारों के अनुसार 'नगंमा' लहासा का मूल संगीत हैं। नंगमा गीतों की विशेष विशेषता है कि यह अत्यन्त सुरीले, सुन्दर, लययुक्त व धीमी गति के होते हैं।

इस प्रकार नगंमा गायन शैली आज भी भारत में रह रहे तिब्बती आवासियों में प्रचलित है। हिमाचल प्रदेश, धर्मशाला मैकलोडगंज में स्थापित "तिब्बतियन इन्स्टीट्यूट ऑफ परफारमिंग आर्टस् में आज भी नंगमा के कई प्रकार प्रचलित है, जिनमें राष्ट्रीय गीत, देशभक्ति के गीत, भाव–प्रणय गीत, प्रकृतिक सौन्दर्य गीत, किसी दैविक–विभूति की प्रशंसा में गीत इत्यादि विषय सम्बन्धी गीत सिखाये जाते हैं। नंगमा गीतों में जिन वाद्ययन्त्रों का प्रयोग किया जाता है उनका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से है :–

नंगमा गायन शैली में प्रयुक्त वाद्ययन्त्र

ल्यूट (पश्चिमी गिटार के समान), पिवांग (केवल आकार में भारतीय शास्त्रीय वाद्य सारंगी के समान), फीडल (दो तारों वाला गज़ से बनजे वाला वाद्य), ग्युमिंग (भारतीय शास्त्रीय वाद्य संतूर के समान) ग्यूं का अर्थ अधिक तारों वाला तथा मिंग का अर्थ वाद्ययन्त्र अर्थात् अधिक तारों वाला वाद्य जिसे अंग्रजी भाषा में हैमर डलसीमर भी कहते हैं।

उपरोक्त तिब्बती वाद्यों में अधिकतर वाद्ययन्त्र जैसे बांसुरी, ग्युमिंग (भारतीय शास्त्रीय वाद्य संतूर के समान) और ल्यूट (पश्चिमी गिटार के समान) इत्यादि वाद्य भारतीय तथा पश्चिमी गिटार के समान) इत्यादि वाद्य भारतीय तथा पश्चिमी देशों के वाद्यों से समानता रखते हैं।

स्टोड–गज़हास

गायन का दूसरा प्रकार स्टोड–गज़हास (STODGZHAS) अथवा पश्चिमी गीत हैं, जो नंगमा गीतों से भिन्न है इसे तिब्बती लोक–नृत्य के नाम से भी जाना जाता है। वास्तव में इस नृत्य गीत शैली का विकास 1920 ई० में हुआ था। आरम्भ काल में कुछ नर्तक कलाकार एक गोल चक्कर बनाकर विभिन्न आवाज़ों तथा लयात्मक पांव संचालन के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करते थे, परन्तु आजकल स्टोड–गज़हास नृत्य–गीत शैली में बाँसुरी, डेमनीयम, फीडल, ग्युमिंग आदि वाद्ययन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इस गायन शैली की विशेषता यह है कि यह गीत साधारण तिब्बती लोगों के जीवन से अधिक सम्बन्धित है, आज भी ये गीत और नृत्य तिब्बती लोगों में अधिक लोकप्रिय है। सर्वप्रथम कलाकार विलम्बित

लय में नृत्य और गीत एक साथ प्रारम्भ करता है, तत्पश्चात् इसकी लय मध्य तथा द्रुत की जाती है। नृत्य का अन्त अतिद्रुत लय में किया जाता है। जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत पूर्व निश्चित सिद्धान्तों एंव जटील नियमों के अन्तर्गत गाया–बजाया जाता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत के मुख्य तत्वों में – स्वर (शुद्ध एंव विकृत), सप्तक (मन्द्र, मध्य, तार) जाति (सम्पूर्ण–षाड्व–औढ़व), वर्जित स्वर, आरोह–अवरोह, पकड़ न्यास स्वर, विशेष स्वर संगति, विशेष अलंकरण जैसे कण, मीण्ड, खटका, मुर्की, लय (विलम्बित, मध्य, द्रुत), ताल, गायन–समय, निबद्ध–अनिबद्ध, थाट राग आदि आते हैं, परन्तु लोकसंगीत में उपरोक्त संगीतिक तत्वों का एक साथ पालन करना अति कठिन कार्य है क्योंकि लोकगीतों में सप्तक, थाट, राग, राग की जाति, वर्जित स्वर, आरोह–अवरोह, पकड़ आदि का कोई नियम नहीं है। केवल उन गीतों में लगने वाले स्वर तथा चलन के आधार पर उसके सप्तक विस्तार का अनुमान लगाया जा सकता है। डा० लाल मणि मिश्र के अनुसार –"लोकसंगीत शास्त्रीय संगीत के परिष्कृत नियमों से दूर आकाश के स्वच्छन्द पक्षी की भान्ति स्वर और लय के चल पंखों पर उड़ता हुआ अपने स्वाभाविक उतार–चढ़ाव में श्रोताओं का मन मुग्ध कर देता है। लोक गीत अथवा लोक संगीत भावना प्रधान होता है तथा उसे शास्त्रीयता की कसौटी पर लाकर परखने का प्रयास करना उसके साथ अन्याय करना होगा। [6]

लोक नृत्य– तिब्बती स्वभाव में नृत्य भी एक आकर्षक विद्या है, चाहे कोई उत्सव हो या पार्टी, अथवा घर की सांयकालीन सभा लहासा के लोग तत्कालीन समय में भी स्टोड गज़हास या सुन्दर नंगमा के साथ नृत्य–गान करते थे और आज भी यह नृत्य गान परम्परा तिब्बतियों के लोकनृत्य में शामिल है। तिब्बती नृत्य शैली की परम्परा में ब्रो–नृत्य, रग्याल गज़हास नृत्य, मुखौटा नृत्य (जिसमें याक नृत्य प्रमुख हैं), शैनांक (ब्लैक–हैट नृत्य) इत्यादि सम्मिलित हैं।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों में रह रहे तिब्बती बौद्ध अनुयायियों की संस्कृति एंव संगीत पर क्षेत्रीय प्रभाव पड़ा होगा अथवा नहीं या वर्तमान में इन क्षेत्रों के संस्कृति एवं संगीत का प्रभाव तिब्बती संगीत पर पड़ा होगा अथवा नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर नाकारात्मक रुप में देना अधिक उचित जान पड़ता हैं क्योंकि तिब्बती भाषा, लिपि, संस्कृति, रीति–रिवाज, त्यौहार, पहरावा, धार्मिक पूजन की विधि, देवी–देवता आदि भारतीय भाषा लिपि, रीति–रिवाज, संस्कृति आदि दोनों एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। निष्कर्षतः तिब्बती तथा भारतीय क्षेत्रीय (स्थानीय) संगीत का परस्पर एक–दूसरे में सम्मिलित न होने का मुख्य कारण भाषा का भेद को ही माना जा सकता है।

Books

2. कांगड़ा गज़टीयर – भाग – 1 पृष्ठ 16
3. Information on touring TIPA. A Information book Page 3
4. nterviews
5. भारतीय संगीत वाद्य – डा० लाल मणि मिश्र पृष्ठ 239

6 भारतीय संगीत वाद्य – डा० लाल मणि मिश्र पृष्ठ 239